मसलकी इख़्तिलाफ़ात की हक़ीक़त और हमारा तरीक़ेकार

लेखक- अब्दुल हसीब भाटकर

अनुवाद-
डा० रफ़ीक़ अहमद

मसलकी इख़्तिलाफ़ात की हक़ीक़त और हमारा तरीक़ेकार

लेखक- अब्दुल हसीब भाटकर

अनुवाद-
डा० रफ़ीक़ अहमद

किताब का नाम : मसलकी इख़्तिलाफ़ात की हक़ीक़त और हमारा तरीक़ेकार

लेखक : डा० रफ़ीक़ अहमद

हिन्दी एडीशन : 2018

प्रतियाँ : 1000

पृष्ठ : 72

कम्पोज़िंग : शाहनवाज़

प्रिन्टर्स : रहमान प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स आबूनगर–फ़तेहपुर

क़ीमत : ₹ **25/-**

मिनजानिब

अल्फाबेट पब्लिकेशन

इलाहाबाद

●

मिलने का पता :

असद बुक डिपो

याकूतगंज, नखासकोना-इलाहाबाद

अलहम्दुलिल्लाह मौजूदा दौर में दीन पसन्दी का रूझान बढ़ता जा रहा है। ख़ासतौर पर पढ़े–लिखे नौजवान दीन की ओर बड़ी संख्या में आकर्षित हो रहे हैं। वह दीन सीखना चाहते हैं और उस पर अमल का सच्चा जज़्बा भी उनमें पाया जाता है, लेकिन दीन की तरफ दिलचस्पी के बाद जब यह नौजवान अमल के लिये रहनुमायी चाहते हैं तो उन्हें अनेक दीनी जमाअतों, मसलकों और फ़िरक़ों की दावत दी जाती है, हालांकि इस दावत का सम्बंध दीन की अस्ल के बजाये खास मसलकी तालीमात और इख़्तिलाफ़ी मसलों से होता है। बल्कि इसके आगे बढ़कर दूसरी जमाअतों और मसलकों की तौहीन और बेइज़्ज़ती ही नहीं काफ़िर बनाने का रवइया इख़्तियार किया। इस रवइये के नतीजे में दीन पर अमल का जोश लेकर उठने वाले नौजवानों को दीन के नाम पर सरफुड़व्वल और आपसी मनमुटाव का सबक़ मिलता है। यह अपने इख़्लास और निष्ठा के बावजूद अपनी सलाहियतों और क़ाबिलियतों को दीन की तबलीग़ और प्रचार पर लगाने के बजाय छोटे–छोटे इख़्तिलाफ़ात को बढ़ाने और उम्मत के अन्दर फ़ितना व फ़साद का ज़रीआ बन जाते हैं। उसका एक नतीजा यह भी निकलता है कि उनमें से कुछ नौजवान ख़ुद दीन से और दीनदार तबक़े से ही मायूस हो जाते हैं। इससे भी आगे बढ़कर ग़ैर मुस्लिम भाइयों के सामने इस्लाम की एक बिगड़ी हुई तस्वीर सामने आती है, जिससे वह इस्लाम में दाख़िल होने से रुक जाते हैं। यह हमारी कैसी बदक़िस्मती है।

क्या यह वही दीने रहमत है जिसमें ईमान वालों में पैदा होने की तमन्ना बनी इसराईल के अंबिया किया करते थे ? क्या यह वही दीन है जिसके ताल्लुक से अल्लाह का फरमान है कि ''आज मैंने तुम्हारे लिये तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया, अपनी नेमतें पूरी कर दीं और तुम्हारे लिये इस्लाम को दीन की हैसीयत से पसन्द किया'' (सू0 माइदा–3)

अल्लाह तआला का बड़ा एहसान है कि उसने हमें एक स्थायी और मुकम्मल दीन की नेमत से नवाज़ा है और नबी–ए–आखिर की उम्मत में पैदा फ़रमाया है। जिसको ऐसी शरीअत अता फ़रमाई जो न सिर्फ इस उम्मत के लिये बल्कि सारे इन्सानों के लिये फ़ायदेमंद, बर्कतों वाली और कल्याणकारी तथा कामयाबी का वाहिद ज़रीआ है। दीने इस्लाम इन्सान के वजूद के लिये आक्सीजन से ज़्यादा ज़रूरी है। यह इन्सानी ज़िन्दगी के व्यक्तिगत और सामूहिक सारे मामलों में अल्लाह की मर्ज़ी व मंशा का इल्म अता करता है। सिर्फ इल्म नहीं देता बल्कि रसूल के ज़रिये उस पर अमल करने के लिये रहनुमाई प्रदान करता है। इस दीने रहमत का ही एक हिस्सा शरीअत है। इस आखिरी दीन व शरीअत की ग़ैर मामूली अहमीयत ही की वजह से उससे जुड़ने और सम्बंध होने के नतीजे में दुनिया में अल्लाह तआला की ताईद व मदद और ग़ल्बा व क़ूव्वत फिर आख़िरत में महान सफलता की खुशखबरी है। इस खुशखबरी का इल्म बनी इस्राईल के ओलमा को हासिल था। सूरह शुअरा आयत नं.197 में फ़रमाया गया ''क्या उनके वास्ते निशानी नहीं है, यह बात कि उसकी ख़बर रखते थे बनी इसराईल के ओलमा'' यह आख़िरी शरीअत तमाम इन्सानों के लिये कितनी ज़्यादा खैर व बर्कत वाली होगी इसका ज़िक्र तौरात में भी पाया जाता है।

शरीअत क्या है ?

शरीअत हक़ीक़त में वह अमली निज़ाम (व्यवहारिक व्यवस्था) है जो ज़िन्दगी की राहों में तफ़सीली हुक्म के ज़रीये अमली रहनुमाई करता है। हर रसूल को एक शरीअत अता की गयी, और हमने हर उम्मत के लिये शरीअत और क़ानून नाज़िल किया है। लेकिन हमसे पहले जो शरीअते दी गयीं और हमें जो शरीअत दी गयी इनमें बुनियादी फ़र्क़ है। पिछली शरीअतें अस्थायी और सीमित वक्त के लिये थीं जो अलग–अलग ज़मानों के रसूलों के ज़रीअे दी गयीं। वह उस ज़माने के

रसूल की क़ौम के भौगोलिक और सामाजिक हालात के लिहाज़ से थीं। उसी लिहाज़ से अलग–अलग इलाक़ों में एक ही वक्त में मुख़्तलिफ़ नबी अलग–अलग शरीअत लेकर आये।

पिछली उम्मतों में कुछ उम्मतें ऐसी भी रही हैं जिनकी संगीन बदआमालियों की वजह से सज़ा के तौर पर सख़्त शरीअतें नाज़िल की गयीं। मिसाल के तौर पर किसी कौम में जानवर के गोश्त की चर्बी में वही चर्बी हलाल रही जो आंतों और हड्डियों से चिमटी हों। कुछ शरीअतों में हफते का एक दिन शनीचर का जिसे ''सबत'' कहते थे, बस उसी दिन शिकार करना हराम था। उनके मुक़ाबले में हमारे आख़री नबी सल्ल0 को जो शरीअत अता की गयी वह हर क़िस्म के हालात के लिहाज़ से मुकम्मल है और मुकम्मल और स्थायी शरीअत का तकाज़ा था कि वह लचकदार हो और हर तरह के हालात में क़ाबिले अमल हो। मानो विभिन्न कौमों के ग़लत रंग–ढंग की बिना पर जो शिद्दत और सीमायें थी, हमारे नबीये रहमत के ज़रीये उन बन्धनों को ढीला और बोझों को हल्का कर दिया गया। अब यह शरीअत आसान और क़ाबिले अमल बन गयी। इसी बात को क़ुरआन इस तरह बयान कर रहा है कि ''यह नबी उन बन्धनों को खोलता है और उनके बोझों को उतारता है जिनमें वह दबे हुये थे'' इसकी स्पष्ट मिसाल यह है कि पिछली शरीअतों में नमाज़ खास मुकाम पर ही अदा की जा सकती थी। जब कि हमारे नबी ने फ़रमाया कि सारी ज़मीन तुम्हारे लिये सजदागाह है। इसी व्यापकता और आसानी के पेशेनजर हुक्म दिया गया (जैसे अबुल सय्याह, यजीद बिन हमीद ने बयान किया है कि मैंने हज़रत अनस बिन मालिक से सुना कि नबीए अकरम सल्ल0 ने फ़रमाया) ''लोगों को आसानी दो तंगी में मत डालो, और लोगों को तसल्ली और खुशखबरी दो, नफ़रत में न डालो'' आसानी का यही उसूल है जिसका लिहाज़ करके मुख़्तलिफ़ मौकों पर नबी सल्ल0 ने मुख़्तलिफ़ तरीक़े का अमल

लिये अमल करना आसान हो जाये। लेकिन उम्मत के अन्दर हो यह रहा है कि एक गिरोह इबादत के अन्दर सिर्फ एक तरीके पर अमल को सही क़रार देता है, उसी एक तरीक़े पर ज़ोर देता है और दूसरे तरीक़े पर अमल करने को ग़लत ठहराता है यह तरीक़ेकार दरअस्ल इल्म और रूहे शरीअत को न समझने का नतीजा होता है।

जाइज़ इख़्तिलाफ़ :–

नबीये अकरम सल्ल0 सहाबा–ए–कराम रज़ि0 को जो हुक्म देते उन पर अमल करने में अक्सर ऐसा होता कि लोग अपनी अपनी समझ और सलाहियत के मुताबिक़ विभिन्न तरीक़ों पर अमल करते। आप सल्ल0 के पास जब यह अलग–अलग तरीकों का मामला पेश किया जाता तो आप सल्ल0 खामोशी इख़्तियार करते जो दोनों पर रज़ामन्दी की दलील होती या फिर आप सल्ल0 दोनों को सही क़रार देते। एक मिसाल जंगे एहज़ाब के मौक़े की है जब अल्लाह ने अपनी ताईद और मदद से नवाज़ दिया और नबी सल्ल0 अपनी कवच और ढाल उतारने लगे तो हज़रत जिबराईल अलैह0 हाज़िर हुये और नबी सल्ल0 से फ़रमाया कि आप अपने हथियार उतार रहे हैं लेकिन मैंने और मीकाइल ने अपने हथियार नहीं उतारे हैं क्योंकि बनु कुरैज़ा (यहूदी कबीले का नाम) को उन की बदअहदी (वचन बद्धता) का सबक सिखाना है'' नबी सल्ल0 ने सहाबा रज़ि0 को सम्बोधित किया जो टुकड़ियों में बटे थें और फ़रमाया कि तुम लोग इस तेज़ी से जाओ कि अस्र की नमाज़ बनु क़ुरैज़ा पहुॅच कर अदा करो। जब दोनों गिरोह रवाना हुये तो रास्ते में ही अस्र का वक़्त हो गया। एक गिरोह ने वहां रुक कर अस्र की नमाज़ अदा कर ली। उन्होंने यह फ़ैसला लिया कि नबी सल्ल0 का मक़सद तेज़ी से बनु कुरैज़ा की तरफ पहुॅचने का था। लेकिन जब नमाज़ कज़ा होने जा रही है तो नमाज़ पढ़ना फर्ज़ है। दूसरे गिरोह ने हुज़ूर सल्ल0 के अल्फाज़ को बुनियाद बनाकर अमल किया और बनु कुरैज़ा तक पहुँचने के बाद ही कज़ा नमाज़ अदा की।

वापसी पर जब यह मामला आपके सामने पेश किया गया तो आपने ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई जो इस बात की दलील है कि दोनों गिरोहों का मौक़िफ़ सही था। यहां एक गिरोह ने हुक्म के अल्फाज़ को बुनियाद बनाकर अमल किया, वहीं दूसरे गिरोह ने हुक्म के मन्शा और मक़सद को सामने रखा। इस लिये हुक्म के सिर्फ़ अल्फाज़ को बुनियाद बनाकर अमल करने को सही और मक़सद को समझ कर अमल करने वाले को ग़लत क़रार देना शरीअत की रूह से नावाकिफ होने की दलील है।

एक और हदीस में आता है कि जिसने टखने के नीचे अपना पाजामा लटकाया वह अपना ढिकाना जहन्नम में बना ले। वहीं दूसरी हदीस में है कि आपने फ़रमाया कि जिसने गुरूर व घमन्ड के साथ अपना पाजामा टखने से नीचे लटकाया वह अपना ढिकाना जहन्नम में बना ले। अब ज़ाहिर है कि जिसने हदीस के अल्फाज़ के मुताबिक अपना पाजामा ऊँचा रखा वह सही है लेकिन अगर किसी का पाजामा टखने से नीचे उतर गया जबकि उसने गुरूर व घमन्ड की वजह से ऐसा नहीं किया तो वह सजा का भागीदार नहीं होगा और उस पर लान–तान नहीं किया जा सकता।

यक़ीनी तौर पर वह अज़ाब का हक़दार नहीं बनेगा। हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रज़ि0 की उम्र बढ़ गयी तो उनका आज़ार (पाजामा) टखने से नीचे आ जाता था वह हुज़ूर सल्ल0 के पास गये और अपना मसला रखा। आपने फ़रमाया कि अबू बक्र तुम्हारा मामला ग़ुरूर व घमन्ड की वजह से नहीं है। दरअस्ल लम्बे आज़ार या लम्बा लिबास पहिनना जो ज़मीन में घसिटता हुआ चले घमन्ड और ग़ुरूर की अलामत है, जो उस वक्त के रईसों और बादशाहों का तरीक़ा था। कुछ लोगों के लिबास इतने लम्बे होते थे कि उनके सेवक उसे पीछे–पीछे पकड़ कर चलते थे। इस ग़ुरूर और फ़ख्र के प्रदर्शन की रद्द में यह फ़रमाया गया था। उसके मुकाबले में आज के दौर में लम्बा लिबास पहिनना अजूबा समझा जाता है। लोग फ़ख्र और शान के इज़हार के

लिये और नये फैशन की नक़ल में छोटा बल्कि चिपका हुआ लिबास पहिनना पसन्द करते हैं। हमारे यहां आजकल हदीस पर अमल करने वाले बहुत से लोग टखनों के ऊपर पाजामा या पैंट तो पहिनते हैं लेकिन अपनी शान के इज़हार के लिये निहायत कीमती घड़ियां, कीमती कपड़े और कीमती से कीमती मोबाइल रखना फ़ख्र की बात समझते है, और शान व शौकत का सिक्का जमाने का मिज़ाज रखते हैं। जबकि ज़ाहिरी तौर पर अल्फाज़े हदीस पर अमल कर रहे होते हैं मगर यह दुहरा किरदार है।

इसी तरह इबादात और मामलात में आप सल्ल0 ने मुख्तलिफ़ तरीक़ों पर अमल करके दिखाया है ताकि मौक़ा महल की ज़रूरत के लिहाज़ से ऐसे मुख्तलिफ़ तरीक़े इख़्तियार किये जा सकते हैं कि इन्सान तंगी में न फंस जाये। आप सल्ल0 आखिरी नबी हैं और इस्लाम आखिरी दीन है। आप सल्ल0 ने ज़िन्दगी के किसी हिस्से और किसी महर्ले में पेश आने वाले हालात के लिये रहनुमाई को अधूरा नहीं छोड़ा है।

विख्यात आलिमे दीन और कानूनदां, आलमी फिक़ह एकडमी के मुम्ताज़ सदस्य और कतर के मुफ्ती अल्लामा यूसुफ़ अल करज़ावी ने अपनी मशहूर किताब ''तरजीहाते दीन'' में लिखा है कि जिन मामलों और मसलों में नबी सल्ल0 के मुखतलिफ तरीके साबित हैं उनमें से किसी एक तरीक़े पर ज़िद करना और उसकी दावत देना सरासर खिलाफ़े सुन्नत है। इसी तरह उनकी दूसरी किताब ''इस्लाम इन्कार और इन्तेहा पसन्दी के नरग़े में'' है। इसमें अल्लामा इब्ने तैमिया रह0 की राय नक़ल किया है कि नबी सल्ल0 से नमाज़ के मुख्तलिफ़ तरीक़े साबित हैं और उन पर अमल होता रहा है। किसी एक ही तरीक़े को सही समझने और उसी पर इसरार करने वाला विद्दती और गुमराह है। इसलिए इस मसले को रूह शरीअत के ऐतबार से समझने की ज़रूरत है। मिल्लत में नमाज़ के जितने तरीक़े रायज हैं

वह सब सही हैं और सब उस आख़िरी शरीअत की व्यापकता एवं व्यहारिकता की दलील और सुबूत हैं।

मशहूर इस्लामी चिंतक डा0 नजात उल्लाह सिद्दीक़ी साहब ने अपनी किताब ''मक़ासिदे शरीअत'' में दीन में इसी वुसअत और व्यापकता के पेशनज़र नबीये अकरम सल्ल0 के दौर के एक वाक़िये का ज़िक्र किया है कि एक काफ़िला नबी करीम सल्ल0 की ख़िदमत में दीन सीखने की गरज़ से हाज़िर हुआ और गुज़ारिश की कि हम दूर रहते हैं हमें नमाज़ के अवक़ात (समय सारणी) बता दीजिये। आप सल्ल0 ने उन्हें मस्जिदे नबवी में ठहराया और पहले रोज़ फज्र की नमाज़ से इशा तक अव्वल वक्त में अदा कीं। काफ़िला वालों ने रुखसत की इजाज़त चाही कि हमने नमाज़ के वक्तों को जान लिया है।

नबीये अकरम सल्ल0 ने उनसे कहा कि एक रोज़ और ठहरो। फिर आप सल्ल0 ने दूसरे दिन सारी नमाज़ें आखिरी वक़्त में अदा फ़रमायीं और क़ाफ़िला वालों से कहा कि जो नमाज़ें पहले दिन पढ़ी गयीं वह अव्वल वक्त में थीं और दूसरे दिन जो नमाज़ें पढ़ी गयीं वह नमाज़ों का आखिरी वक्त था। नमाज़ के अवकात इन दोनों के दरम्यान है। आप सल्ल0 ने यह तालीम हिदायते इलाही की रोशनी में दी। जब नमाज़े फर्ज़ हुईं तो हज़रत जिबराईल अलै0 ने दो रोज़ लगातार इसी तरह अव्वल और आखिर वक़्त में हर नमाज़ की इकामत फ़रमायी और बताया कि नमाज़ें इन दोनों वक्तों के दरम्यान हैं।

मुख्तलिफ़ इमामों ने नमाज़ के अवकात के सिलसिले में दीन की इसी वुसअत और फैलाव को बुनियाद बना कर नमाज़ के फ़तवे दिये हैं। जैसे इमाम शाफिई रह0 जिस इलाके में रहते थे वहां के लोगों का पेशा खेती बाड़ी व बागवानी का था। खेती–बाड़ी करने वाले लोग सुबह बहुत सवेरे घर छोड़ देते हैं और खेतों में चले जाते हैं। इसलिये नमाज़ फज्र अव्वल वक्त में अदा करने की तालीम देकर लोगों की आसानी का लिहाज़ रखा। वरना देर से वक़्त रखने पर लोगों को

दिक्कत होती । इमाम शाफिई रह0 का यह तरीक़ा आप सल्ल0 की उस तालीम के पेश नज़र था कि लोगों के लिये आसानी पैदा करो। तंगी में न डालो'' ।

इमाम अबू हनीफा रह0 का नमाज़े फज्र को आखिर वक्त में अदा करने की तर्गीब की बड़ी वजह यह थी कि आप शहरी ज़िन्दगी से वाबस्ता थे। जहां कारोबारी लोग देर से कारोबारी व्यस्ततायें शुरू करते हैं। इस अमल की रूह भी आसानी पैदा करना है। हक़ की तलाश में तहक़ीक़ व जुस्तजू भी एक ऐसा अमल है जो हर पल इस कायनात में जारी है। इसी तहक़ीक़ व जुस्तुजू से इख्तिलाफ़े राय वजूद में आता है जो सरासर खैर व बर्कत होता है इसी सिलसिले से एक हदीस में उम्मत के इख्तिलाफ़ को रहमत कहा गया है। जबकि सनद और प्रमाण के एतेबार से हदीस कमज़ोर है।

इन्सान दीन व दुनिया के मामलों में ग़ौर व फिक्र और तहक़ीक़ व जुस्तुजू करे तो इख्तिलाफे राय का होना बिल्कुल स्वाभाविक हैं जैसा कि कुरआन में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया ''ऐ ईमान वालो ! इताअत करो अल्लाह और उसके रसूल की और उन की जो तुम्हारे दरम्यान आदेश देने के अधिकारी हों। फिर जब रायों में इख्तिलाफ़ हो जाये तो उसको अल्लाह और उसके रसूल की तरफ लौटाओ (सूरह निसा)

इस आयत से यह पता चलता है कि इन्सान के सामूहिक जीवन में राय का इख्तिलाफ़ मुम्किन है मगर वह हक की तलाश और सही फ़ैसले तक पहुँचने की कोशिश का नतीजा होना चाहिये जो पसन्दीदा अमल है। मगर जब राय का यही इज्तिलाफ़ रंजिश, नफ़रत, व्यक्तिगत दुश्मनी और गिरोह–बन्दी का रूप धारण करले या उसूलों और सिद्धान्तों पर क़ाइम रहने के बजाये ग़ैर बुनियादी और मामूली मसलों को बुनियाद बनाकर उसूले दीन और रूहेदीन से दूरी पैदा कर दे और एक दूसरे पर लान–तान का सबब बन जाये तो यह नापसन्दीदा इख्तिलाफ़ है। जो समाज में फूट और बिखराव का सबब बनता है।

हम देखते हैं कि सहाबा–ए–कराम के दरम्यान भी रायों का इख़्तिलाफ़ रहा है लेकिन वह व्यक्तिगत रंजिश या नफ़रत का सबब न बन सका और न ही उन इख़्तिलाफ़ ने उनके समाज को बांटा। इख़्तालाफ़ का मतलब है कि लोग सोंचते और ग़ौर व फ़िक्र करते हैं। जो क़ौम गौर व फ़िक्र से काम न ले वह पस्ती चली जाती हे। इसीलिये क़ुरआन ने भी ग़ौर व फ़िक्र करने पर उभारा है और रसूलल्लाह सल्ल0 ने भी अमली तौर पर सोंच विचार का मिज़ाज बनाया।

हज़रत अबू बक्र रज़ि0 और हज़रत उमर रज़ि0 जैसे प्रतिष्ठित सहाबा–ए–कराम और खलीफ़ा भी कई मामलों में एक दूसरे से मुख़्तलिफ़ राय रखते थे। मिसाल के तौर पर बैतुल माल से दिये जाने वाले वज़ीफों के सिलसिले में हज़रत अबू बक्र रजि0 बराबर–बराबर बटवारे के समर्थक थे जबकि हज़रत उमर रज़ि0 ज़रूरतमन्दों के त्याग और कुर्बानी का लिहाज़ करते थे। किसने कितनी कुर्बानी दी है इसी लिहाज़ से कम व वेश दिया करते थे। माले ग़नीमत के बटवारे के मामले में और हज़रत अबू बक्र रज़ि0 खुम्स (पांचवा हिस्सा) को बैतुल माल में जमा करके बाक़ी माल को फौजिओं में बांट देने के समर्थक थे। जबकि हज़रत उमर रज़ि0 ने जब ईराक़ फतेह हुआ तो कुल की कुल ज़मीनों को बैतुल माल की सम्पत्ति क़रार दिया और उसे सिर्फ फौजिओं के दरम्यान बांटने से इन्कार कर दिया। यह चन्द सहाबा–ए–कराम की रायों का इख़्तिलाफ़ था। उसके बावजूद एक दूसरे के साथ अख़लाक़ और मुहब्बत में आपसी एतेमाद में इत्तिफाक़ और पाकीज़ा जज़्बात रखते थे। हज़रत उमर रज़ि0 से किसी ने कहा कि आप अबू बक्र रज़ि0 ने एक रात जो हुज़ूर सल्ल0 के साथ ग़ारे सौर (सौर नाम की गुफा) में गुज़ारी थी वह उमर रज़ि0 और आले उमर रज़ि0 की पूरी ज़िन्दगी से बेहतर थी। यह थे वह लोग जो हमारे लिये नमूना हैं।

ऐसा ही तरीकेकार हज़रत अबू बक्र रज़ि0 से भी साबित है।

अपनी वफ़ात से पहले जब आपने हज़रत उमर रज़ि0 को नामज़द किया तो कुछ सहाबा–ए–कराम ने कहा कि आपने उमर रज़ि0 को हमारा खलीफ़ा बना दिया जबकि उनकी सख्ती से आप वाकिफ हैं। अल्लाह तआला के सामने आप क्या जवाब देंगे ? उस वक्त हज़रत अबू बक्र रज़ि0 ने फ़रमाया कि मैं कहूंगा कि मैंने तेरे बन्दों में से सबसे अच्छे बन्दे को ख़लीफ़ा बनाया। इख़्तिलाफ़ अपनी जगह इसके बावजूद दोनों के दिल आपस में किस तरह जुड़े हुये थे और एक दूसरे की इज़्ज़त व अज़मत का कितना ख्याल था कि ज़मीन की मिट्टी उन पर असर अन्दाज़ नहीं हो सकती थी।

हज़रत उमर रज़ि0 ने अपने शासनकाल में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 को कूफा वालों की रहनुमाई के लिये भेजा था। मदीने का सादा समाज कूफा के विकसित समाज से बहुत मुख़्तलिफ़ था। ऐसे में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 को कूफा भेजना ऐसा था जैसा कि एक आम देहाती को एक बड़े शहर में लोगों की तालीम के लिये भेजना। लेकिन उनकी फ़ज़ीलत यह थी कि रसूलुल्लाह सल्ल0 ने फ़रमाया था कि किसी को कुरआन सीखना हो तो चार इबादेला (यानी अब्दुल्ला नाम के चार सहाबा) से सीखे इन चार में एक हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 भी थे।

अल्लामा इब्ने तैमिया रह0 ने लिखा है कि सौ मुख़्तलिफ़ मसाइल में हज़रत उमर रज़ि0 और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 के दरम्यान इख़्तिलाफ़ था। मिसाल के तौर पर अगर कोई शख्स अपनी बीवी से यह कहे कि तुम मुझ पर हराम हो तो अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 कहते हैं कि यह क़सम है। इससे तलाक़ नहीं हुई जब कि हज़रत उमर रज़ि0 के मुताबिक़ तलाक़ हो गयी। इसमें मुहावरों के इस्तेमाल और गुफ्तगू के अन्दाज़ में फ़र्क़ का मामला हैं जो अलग–अलग जगहों में अलग–अलग होता है।

एक दूसरे मसले में हज़रत इब्न मसऊद रज़ि0 नमाज़ में रुकूअ के दौरान दोनों हाथों को घुटनों के दरम्यान रखने से मना करते थे लेकिन हज़रत उमर रज़ि0 की राय दूसरी थी। ऐसे इख़्तिलाफ़ात के बावजूद दोनों बुज़ुर्गो के दरम्यान व्यक्तिगत ताल्लुकात और आपसी ऐतमाद और सम्मान में कोई ख़लल पैदा न हो सका। हज़रत उमर रज़ि0 के इन्तिकाल के बाद दो लोग हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि0 के पास आये। उनमें से एक ने हज़रत उमर रज़ि0 से कुरआन सीखा था। हज़रत इब्न मसऊद रज़ि0 ने कहा कि मुझे कुरआन सुनाओ, उनसे कुरआन सुनकर आप सल्ल0 ज़ोर–ज़ोर रोने लगे और फ़रमाया कि उमर इस्लाम के मज़बूत किला थे जिसमें दाखिल होकर कोई निकल नहीं सकता था। लेकिन उमर के इन्तिकाल से वह किला टूट कर बिखर गया है। यह जज़्बात थे हज़रत इब्न मसऊद के, जिनसे हज़रत उमर के सौ से ज़्यादा मसलों में इख़्तिलाफ़ रहा। राय का इख़्तिलाफ़ अपनी जगह और आपसी मुहब्बत और इत्तेहाद अपनी जगह। यह है इस्लाम की रूह।

हदीसों में मिलता है कि हज़रत अबू हुरैरा रज़ि0 जब नमाज़ में खड़े होते तो अपना हाथ सीने पर बांध लेते जबकि इब्ने मसऊद रज़ि0 नाफ़ के नीचे हाथ बांधते। लेकिन दोनों में कभी बहस या एक दूसरे को ग़लत साबित करने की कोशिश नहीं की गयी। और दोनों आपस में पक्के दोस्त और मुत्तहिद थे।

जो लोग सूरज की रोशनी में ज़िन्दगी गुज़ारते आये हों वह किस तरह तारीकी और अन्धकार फ़ैलाने का सबब बन सकते है और जिन लोगों के पास पड़ोस में फूलों के बाग़ हों वह तो ख़ुशबू ही फैलायेंगे, बदबू से उनका क्या सम्बंध। एक मोमिन कुरआन के जौहर के साथ ज़िन्दगी गुज़ारता है जो सूरज की रोशनी से ज़्यादा रौशन है और नमाज़ में अल्लाह और फ़रिश्तों की महफिल में होता है। वह नमाज़ से निकलते ही दूसरे मोमिन भाई को फुरूई (वह बातें जिसका सम्बंध

बुनियादी अक़ीदों और मसलों से न हो) मसलों में इख़्तिलाफ़े राय की बुनियाद पर लान–तान कर सकता है? इसके विपरीत मोमिन तो अल्लाह और उसके फरिश्तों की महफिल की खुशबू लेकर समाज में खुशबू ही फैलायेगा, बदबू फैलाने की उम्मीद उससे कहां की जा सकती है?

तहक़ीक़ व जुस्तजू ज़रूरी है :–

कुरआनी शिक्षायें और उनकी व्याख्या शरीअते मुहम्मदी सल्ल0 के रूप में इन्सानीयत की महान सम्पत्ति हैं। बदलते हुये हालात और समाजी ज़रूरियात में इन्सानों की रहनुमाई कुरआन व सुन्नत की रोशनी में बहरहाल होनी ही चाहिए। नये–नये हालात और नये–नये मसाइल में कुरआन व सुन्नत से तहक़ीक़ व जुस्तजू करते रहने के माहौल को परवान चढ़ाना पड़ेगा, जैसा कि नबी सल्ल0 ने किया, जिसके नतीजे में ऐसी शख्सीयतें वजूद में आयीं जो विकसित और सभ्य समाज के विभिन्न और विविध समस्याओं में भी भी फैलती चली गयीं और इस्लामी तालीमात की रूह को कौमों और मुल्कों में फैलाते रहे। यहां तक कि नये–नये समाज भी इस्लामी मूल्यों और खूबियों से परिपूर्ण होकर रोशन हो गये।

हुज़ूर अक़दस सल्ल0 ने जब हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ि0 को उस समय के विकसित देश यमन में रहनुमायी के लिये रवाना किया और उनके साथ मदीना से बाहर दूर तक पैदल गये और फ़रमाया कि ऐ मआज़ तुम से मुझे बड़ी मुहब्बत है। लेकिन जब तुम वापस आ जाओ तो शायद मुझे न पा सको। ऐ मआज़ जब तुम वहां किसी मामले का फ़ैसला करोगे तो किस बुनियाद पर करोगे? हज़रत मआज़ ने जवाब दिया कि ऐ अल्लाह के रसूल पहले मैं कुरआन में तलाश करूंगा, आपने फ़रमाया कि अगर तुम उसको कुरआन में न पाओ? हज़रत मआज़ रज़ि0 ने जवाब दिया फिर आपकी सुन्नत में तलाश करूंगा। आप सल्ल0 ने कहा अगर सुन्नत में भी न पाओ तो ? हज़रत मआज़ ने

फ़रमाया कि फिर तो अपनी राय से इज्तिहाद करके फ़ैसला करूंगा। इस जवाब से आप सल्ल0 खुश हो गये। हज़रत मआज़ की तारीफ़ की और दुआ फ़रमाया कि ऐ अल्लाह तेरे रसूल के रसूल को जो बात तूने समझाई तो इस पर तेरा रसूल राज़ी है। आप सल्ल0 की तर्बियत में हज़रत मआज़ जैसे कई अज़ीम शख्सीयतें तैयार हुईं जिन्होंने कूफा, यमन, शाम, ईरान से आगे बढ़ते हुये सभ्य क़ौमों में जाकर रहनुमाई के फ़रीज़े अन्जाम दिये और उनके समाज को इस्लामी ज़िन्दगी में ढाल दिया।

हज़रत मौलाना अली मियां नदवी रह0 ने अपनी किताब ''नबूअत का अस्ल कारनामा'' में लिखा है कि इस तरह की सैंकड़ों शख्शीयतें को तैयार कर देना हुज़ूर सल्ल0 का अस्ल कारनामा था। इसी तरह फर्द की तलाश और उनको ज़िम्मेदारियां संभालने के लायक़ बनाने का काम हज़रत उमर रज़ि0 ने भी अपने दौरे ख़िलाफ़त भी ज़ारी रखा। इसी सिलसिले में मौलाना काज़ी अतहर मुबारकपुरी ने अपनी किताब ''ख़ैरूल कुरून की दर्सगाहें'' में लिखा है कि हजरत उमर रज़ि0 के दौरे खिलाफ़त में सहाबा कराम में से मुखतलिफ़ इल्मी शख्शीयत मस्जिद में इकट्ठा होतीं। मिसाल के तौर पर अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0, अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि0, अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रज़ि0, अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि0 वग़ैरा। ये महान और विद्वान सहाबा–ए–कराम बदलते हुये हालात में पेश आने वाले मसाइल व मामलात पर गुफ्तगू करते और सही हल निकालते। इस तरह अवाम की रहनुमाई का सामान होता था। इस मुबारक महफ़िल को ''कलाज़ह'' यानी मोतिओं के हार का नाम दिया जाता था।

हज़रत अमीर माविया रज़ि0 जब मदीना आते तो इस मजलिस में ज़रूर शामिल होते थे। मदीना के गवर्नर मरवान बिन हकम की शरारतों की वजह से यह महफ़िल बन्द हो गयी। इस पर अमीर माविया रज़ि0 ने उसको लिखा कि तेरी गवर्नरी और तेरे फ़ैसले पर लानत है कि

तूने एक मुबारक मजलिस को बिखेर दिया। हमारे यहां जारी मुख़्तलिफ़ मसलकों के इमामों के इख़्तिलाफ़ को देखें तो वह भी हक़ व नाहक़ का इख़्तिलाफ़ नहीं था बल्कि शरीअत की वुसअत (व्यापकता) और सहूलत के एतिबार से उनके यहां फ़तवे पाये जाते हैं। मसलके हनफ़ी जिसकी निस्बत इमाम अबू हनीफ़ा रह0 की तरफ की जाती है, में सिर्फ़ 20 प्रतिशत फ़तवे खुद इमाम अबु हनीफा रह0 के हैं बाकी 80 प्रतिशत इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद के हैं जो उनके शागिर्द थे। इस्लाम दूर–दूर तक पहुँच गया। नये हालात व मसाइल पैदा होते रहे। उस लिहाज़ से उन इमामों ने फ़तवे ज़ारी किये। इनमें बहुत से इमाम अबू हनीफ़ा के फ़तवों से अलग और मुख़्तलिफ़ थे और यह पूरा अमल शरीअत की व्यापकता और उम्मत की आसानी के लिहाज़ से किया गया।

इमाम शाफिई रह0 और इमाम मुहम्मद रह0 का इख़्तिलाफ़-

विरासत के मसले में इमाम शाफिई रह0 और इमाम मुहम्मद रह0 की रायें अलग–अलग रहीं और कई दिनों तक उन मसलों में दोनों के दरम्यान बहसें जारी रहीं। लेकिन उनके आपस में दिली मुहब्बत और आपसी ताल्लुक़ का अन्दाज़ा इस वाक़िये से लगा सकते हैं जो ''इमाम शाफ़िई के इल्मी सफर'' नामी किताब में दर्ज है कि इमाम शाफ़िई रह0 शहरी ज़िन्दगी के मसायल सीखने के लिये इमाम मुहम्मद रह0 के पास गये थे। जब वहां से वापसी के लिये तैयार हुये तो इमाम मुहम्मद रह0 उनकी क़ाबिलियत और ज़िहानत से बहुत खुश हुये, दुआयें दीं और अपनी आधी जायदाद बेंच कर इमाम शाफिई रह0 को दी ताकि वह अपना इल्मी सफर ज़ारी रख सकें। दूसरी तरफ ख़लीफ़ा मामून के दौर में इमाम शाफ़िई को सज़ाये मौत दी गयी और उसके लिये उन्हें दरबार में पेश किया गया। इमाम मुहम्मद रह0 जो उस वक्त चीफ़ जस्टिस थे, दरबार में तशरीफ लाये, तब इमाम शाफिई रह0 ने खलीफ़ा मामून से कहा कि अगर इमाम मुहम्मद रह0 यह कह दें कि

मेरा यह जुर्म है और जो सज़ा मुझे दी गयी है वह सही है तो मैं खुशी–खुशी उसे कुबूल कर लूंगा। मामून ने ईमाम मुहम्मद रह0 से पूछा तो इमाम ने फ़रमाया कि अगर इमाम शाफ़िई यह कुबूल करते हैं कि उन्होंने यह जुर्म नहीं किया है तो वह बिल्कुल सही कहते हैं क्यों कि मैंने उन्हें कभी झूठ बोलते नहीं पाया। यह सुनकर मामून ने इमाम शाफिई की सज़ा रद्द कर दी और उन्हें रिहा कर दिया। शरीअत की तशरीह में इन दोनों इमामों के दरम्यान इख्तिलाफ़े राये के बावजूद उनके आपसी ताल्लुक और मुहब्बत का अन्दाज़ा इस वाक़िया से लगाया जा सकता है।

आज हमारे इख्तिलाफ़ात :-

आज हम लोग जिस दौर से गुज़र रहे हैं उसमें बरेलवी मसलक और वहाबी मसलक दोनों के दरम्यान किस तरह के इख्तिलाफ़ हैं, इससे हम सब लोग वाकिफ़ हैं। आमतौर पर लोग यह समझते हैं कि कब्रों के चक्कर लगाना, ताज़ीमी में सजदा करना, ग्यारहवीं मनाना, आशूरा और मीलाद की रस्में बहुत अहम हैं, हालांकि इन सारी रस्मों के खिलाफ़ खुद इमाम मसलके अहले सुन्नत अहमद रज़ा खां बरेलवी रह0 ने फ़तवे दिये हैं, वह ''फ़तावे रज़विया'' में देखे जा सकते हैं। इन रस्मों में ज़्यादातर बातों को दोनों मसलक के लोग ग़लत समझते हैं अलबत्ता अस्ल इख्तिलाफ़ अल्लाह की कुदरत और नबी सल्ल0 की अज़मत के ताल्लुक़ से कुछ बातों में है जिनमें मसलक अहलेसुन्नत के उलमा के यहां शिद्दत पैदा हो गयी है और वहाबी मसलक के बाज़ उलमा की तहरीरों में ज़रा ग़ैर मुहतात बातें आ गयी हैं। अस्ल बहस इन्ही मामलों में है। चुनांचे दिल्ली की जामा मस्जिद में हज़रत मौलाना फज़्लेहक़ ख़ैराबादी रह0 और सैयद शाह इस्माइल शहीद रह0 के दरम्यान मशहूर मुबाहसा (वाद–विवाद) हुआ था। जो कई महीनों तक चला था, उस बहस–मुबाहसे की वजह से अवाम में झगड़े व फ़साद की शक्ल भी पैदा हो गयी थी। अगर इन दोनों की

तरफ से शिद्दत और उत्तेजना के बजाये एतेदाल और सन्तुलन की राह अपनायी जाती तो इन मसलों में इतना विवाद पैदा न होता। मौलाना फ़ज़्ले हक़ खैराबादी रह0 ने जो मशहूर शायर मिर्ज़ा ग़ालिब के दोस्त थे और दीवाने ग़ालिब भी उनके हाथों संकलित हुआ था, जब देखा कि बहस एक महीने से ज़्यादा लम्बी चल चुकी है तो मिर्ज़ा ग़ालिब से मदद चाही की। मिर्ज़ा ग़ालिब ने जवाब दिया कि अल्लाह तआला ने इस काइनात में एक ही खातमन्नबीईन सल्ल0 को पैदा किया लेकिन वह इस बात पर क़ादिर है कि वह ऐसी–ऐसी कई और काइनात बनाये और हर काइनात में मुहम्मद सल्ल0 जैसा एक नबी पैदा कर दे काश हम ग़ालिब का रवइया इख्तियार करते तो हमारे दरम्यान इख्तिलाफ़ात इतने शदीद न होते और इतनी दूरियां न पैदा होतीं। लेखों और तहरीरों में इहतियात की भी ज़रूरत होती है, खास कर शाने नबूअत में। इस तरह भूल और बेइहतियातों से बहुत सारे इख़्तिलाफ़ात पैदा होते हैं। इन बेइहतियातों को कुबूल कर लेना चाहिये। नबी सल्ल0 की शान को न घटाया हुआ महसूस हो न बढ़ाया हुआ। एतेदाल बहुत ज़रूरी है।

शिद्दत एक मुसीबत :–

मौजूदा दौर में एक और अहम मसला मुख्तलिफ़ दीनी और समाजी जमाअतों के वुजूद और उनके दरम्यान इख्तिलाफ़ात का है। उलमा में कुछ इख्तिलाफ़ात होते तो ज़्यादा बड़ी बात न थी। इन मुख्तलिफ़ दीनी मसलों और कुछ दुनयवी मामलों में अपने–अपने मोकिफ़ के मुताबिक़ अलैहदा–अलैहदा जमाअतें बना ली गयी हैं और तमाशा यह है कि हर जमाअत के लोग अपने मोकिफ़ को हक़ साबित करके उस पर अड़े रहना चाहते हैं। इससे हटकर कुछ भी बर्दाश्त करने को तैयार नहीं हैं। हर मज़हबी जमाअत खुद को नजात पाने वाली जमाअत और दूसरों को जहन्नमी क़रार दे रही है। इसी तरह दुनयवी मामलों में अपनी–अपनी समझ और फ़ायदे के मुताबिक़ जमाअतें बना

कर मैदान में उतरे हुये हैं। अब दीन का एक मुख़लिस (सत्यनिष्ठ) आदमी चाहता है कि दीन की सही पैरवी करे या दुनिया में इस्लाम और मिल्लते इस्लामिया की भलाई और कामयाबी के काम में लगे तो वह किस तरफ़ जाये। उसके लिये यह तय करना सख्त मुश्किल हो गया है।

एक मशहूर व मारूफ़ आलिमेदीन ने इसी मसले में रहनुमाई के लिये अपनी किताब ''तर्जीहाते दीन'' में लिखा है कि आज पूरी इन्सानीयत जिस तरह के नये–नये मसाइल से दो चार है और खुद उम्मते मुस्लिमा भी। तो ऐसे में मैं ग़लत नहीं समझता कि मुख्तलिफ़ कामों को लेकर बहुत सी जमाअते इस दीन की तबलीग़ और प्रसार का फ़रीज़ा अन्जाम दें और आगे बढ़कर पूरी इन्सानी आबादी के सामने भी अल्लाह की बन्दग़ी को समस्याओं के निवारण के तौर पर पेश करें। अलबत्ता जमाअतों को आपसी सहयोग का रवैया अपनाना चाहिये। ताकि दीन के ग़लबे और इशाअत की मन्ज़िल आसान हो जाये। हक़ीक़त यह है कि अगर हर जमाअत दूसरी जमाअत की सेवाओं को स्वीकार करने लगे और अपने लिये उस मैदाने कार का चुनाव करले जो दूसरी जमाअतें नहीं कर रही हैं जिसकी इन्सानियत को ज़रूरत हो तो काम ही बन जाये। आज एक ही तरह के कामों की अधिकता क्यों है? इसकी वजहें क्या हैं? इस पर हर जमाअत और गिरोह को ग़ौर करना चाहिये।

दो बड़ी जमाअतों की खिदमात :–

हिन्दुस्तान की एक बड़ी दीनी जमाअत तबलीग़ी जमाअत है। जिसने दीन की हिफ़ाज़त के ऐतिबार से बड़ा काम किया है। गॉव–गॉव, बस्ती–बस्ती, मस्जिदों को आबाद किया और दीन से नावाकिफ़ मुलसमानों को दीन की बुनियादी बातों से परिचित कराया और नमाज़ पढ़ना सिखाया। वहीं दूसरी तरफ़ इस दौर में जब मुसलमानों का पढ़ा–लिखा और समझदार व दानिशवर तबक़ा दीन से

दूरी और बेदीनी का रास्ता अपना रहा था और इस्लाम को आऊट आफ डेट क़रार दे रहा था तो एक बड़ी दीनी तहरीक़ जमाअते इस्लामी ने उसकी रोकथाम में अहम रोल अदा किया। जमाअत के संस्थापक मौलाना अबुल आला मौदूदी रह0 की तहरीरों ने उस तबक़े में इस्लाम पर दोबारा ऐतमाद बहाल किया कि इस्लाम आज भी जीता जागता दीन और क़ाबिले अमल जीवन व्यवस्था है। अगर यह दोनों जमाअतें एक दूसरे के कामों का सराहना करते हुये सहयोग और मेल–जोल का तरीक़ा अपनायें तो इकामते दीन का बरसों में होने वाला काम महीनों में अन्जाम पा जाये और दूरगामी नतीजे हासिल हों। तहरीके इस्लामी ने इसी सोच व विचार के पेशेनजर दीन की हिफाजत और मिल्लते इस्लामिया की मज़बूती के लिये मुख्तलिफ़ फ़िरके व मैदाने अमल रखने वाली जमाअतों को साथ लेकर चलने वाली परम्परा डाली है। इसी सोच के नतीजे में मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड और मजलिसे मुशावरत का क़ियाम अमल में आया है। जिसमें शिआ, सुन्नी, देवबन्दी, बरेलवी, अहले हदीस वग़ैरा हर मसलक के उलमा–ए –कराम और अवाम शामिल है।

आम मुसलमानों के लिये यह एक नमूना है। इसी तर्ज़ पर मुख्तलिफ़ मसलकों और जमाअतों के लोग इख़्तिलाफ़ात से ऊपर उठकर आपस में इत्तिहाद और अपनेपन का रवैया इख्तियार करने पर आमादा हो जायें तो हम एक बड़ी कूव्वत बन सकते हैं।

अल्लाह का शुक्र है :–

एक वक़्त था कि जब अल्लाह के दीन को क़ाइम करने के जज़्बे के साथ ग़ैर मुस्लिम भाईयों में दावती काम करने और मुस्लिम समाज में इस्लाह और तन्जीम के काम पर आमादा करने के लिये न सिर्फ अपने कार्यकर्ताओं बल्कि पूरी उम्मत को तरग़ीब देनी पड़ती थी। अलहम्दुलिल्लाह उन कोशिशों का नतीजा है कि आज वतनी भाईयों में दावत का काम करने के लिये मुख्तलिफ़ लोग और जमाअतें सक्रिय हैं

और उनके अच्छे नतीजे भी दिखाई पड़ रहे हैं। वहीं खुद मुसलमानों में क़ुरआन के अध्ययन और दर्से क़ुरआन के लिये कितने ही लोग और गिरोह उठ खड़े हुये हैं। इसका फ़ायदा यह है कि लोगों में क़ुरआन को समझने में दिलचश्मी बढ़ रही है और पढ़ा–लिखा तबक़ा भी अब क़ुरआन से जुड़ रहा है। अब क़ुरआन को समझने का काम सिर्फ आलिमों का नहीं है बल्कि अनेक भाषाओं में अनुवाद की मदद से क़ुरआन को समझ कर पढ़ने का रूझान पैदा हुआ है। अब देखिये कि समाज की इस्लाह और सुधार के लिये अहले सुन्नत वल जमाअत ने नशाखोरी के खिलाफ अभियान छेड़ रखा है। तहरीके इस्लामी इन सब कामों को अपना काम समझकर सहयोग करती है और करना भी चाहिए। फिर तहरीके इस्लामी के लोगों को उन कामों की तरफ तवज्जो देनी चाहिये, जो दूसरे गिरोह और जमाअतें अब तक नहीं कर रहीं है। जबकि इन्सानियत और मिल्लते इस्लामिया को उनकी ज़रूरत है अगर हमारे समाज में यह माहौल आम हो जाये कि लोग उन कामों को प्राथमिकता दें जो दूसरे लोग नहीं कर रहे हैं और उन कामों में मदद करें जो दूसरे लोग कर रहे हैं तो यक़ीनन यह उम्मत अल्लाह तआला की मदद और कामयाबी से हमकिनार होगी और फ़िरक़ाबन्दी और बिखराव से नजात पाकर मुत्तहिद और ताक़तवर बन सकेगी। जिसकी एक मिसाल पर्सनल ला बोर्ड है। अल्लाह उसको बुरी नज़र से बचाये।

लेकिन अफ़सोस :

अल्लाह का शुक्र है कि एक तरफ ये सारी कोशिशें हो रही हैं लेकिन अफ़सोस है कि दूसरी तरफ़ कुछ लोग फिर वही पुराने फुरूई (जिनका सम्बंध दीन की बुनियादी बातों से न हो) मसाइल को लेकर एक साजिश के तहत हमारी अवाम और ओलमा के दरमियान अपशब्द और कुक्रिया भाषा इस्तेमाल करने में लगे हुये हैं, यहां तक कि शादी ब्याह के रिश्तों में भी गिरोह बन्दी नज़र आती है और इस उम्मत के

ओलमा और नौजवानों की सलाहियतें भी इस बेकार और नुकसानदेह कामों में लग रही है। मुफ़्ती–ए–आज़म पाकिस्तान मुफ़्ती मुहम्मद शफी रह0 ने अपनी किताब ''वहदते उम्मत'' में अपने उस्ताद मशहूर हदीस के विद्वान और आलिमेदीन कि मौलाना अनवर शाह कंशमीरी रह0 के आख़िरी वक़्त के एहसासात नकल किये हैं कि मौलाना जब सख्त बीमारी में मुब्तेला थे और उनके शागिर्द उनके करीब बैठे थे तो मौलाना ने उन सबसे मुखातिब होकर फ़रमाया कि मैंने अपनी सारी उम्र बर्बाद कर दी। उनके एक शागिर्द ने कहा कि हज़रत आपने तो अपनी पूरी ज़िन्दगी दीन की तबलीग व प्रसार में लगा दी। उस्तादे रह0 ने फ़रमाया कि मैंने अपनी पूरी सलाहियतें दीन के नाम पर सिर्फ इस काम पर लगायीं कि किस तरह हनफ़ी मसलक दूसरे मसलकों में बुलन्द है हालांकि इमाम अबू हनीफ़ा रह0 ने दीन की जो अज़ीम खिदमात अन्जाम दी हैं उनकी बलन्दी साबित करने में अपनी सलाहियतें लगाने की ज़रूरत नहीं थी। अल्लाह तआला ने खुद उनको अज़ीम मुकाम अता किया है। एक बात और सुनो ! आखिरत में भी यह अक़ीदा खुलने वाला नहीं है कि इमाम अबू हनीफ़ा रह0 का मसलक बेहतर था या इमाम शाफिई रह0 का। तुम क्या समझते हो कि अल्लाह तआला अपने दोनों मुत्तकी बन्दो को आख़िरत में रुसवा करेगा ? इसलिये मैं समझता हूँ कि मैंने अपनी ज़िन्दगी बेकार कामों में बर्बाद कर दी।

यहूदियों की राह :

आज हम जिन छोटे–छोटे मसलों को बुनियाद बनाकर एक दूसरे को काफ़िर बनाने, मज़ाक उड़ाने और ज़ुल्म व ज़्यादती पर आमादा हैं। यह पिछली उम्मतों यानी यहूद व नसारा का तरीक़ा रहा है। क़ुरआन मजीद और नबी–ए–अकरम सल्ल0 ने उम्मत को सावधान किया था कि तुम उन आमाल में मुब्तेला न हो जाना। मगर अफसोस कि लोग मानते नहीं और वही सब कर रहे हें जो पिछली उम्मतों ने किया और बार–बार अल्लाह के अज़ाब का शिकार हुये।

नबी–ए–अकरम सल्ल0 ने सचेत किया था कि तुम यहूद व नसारा की ऐसी पैरवी करोगे कि अगर वह गोह के बिल में घुसे तो तुम भी घुस जाओगे। यह एक चेतावनी थी कि उस अमल के नतीजे में अपनी क़ूव्वत और संसाधनों के बावजूद वह लोग बेइज़्ज़त और ज़लील बनाकर रख दिये गये। कहीं तुम्हारा हाल भी वही न हो जाये। यह हालत अल्लाह के अज़ाब की एक शक्ल है।

क़ुरआन में अल्लाह तआला ने ताकीद की कि कहीं तुम भी उन लोगों की तरह न हो जाओ जो फिरकों में बट गये, और आपस के इख़्तिलाफ़ात में मुब्तेला हो गये। जब कि उनके पास स्पष्ट निर्देश पहुॅच चुका था, उनके लिये बड़ा अज़ाब है (आले इमरान 108) दूसरी जगह फ़रमाया कि जिन लोगों ने अपने दीन को टुकड़े–टुकड़े कर दिया और गिरोहों में बट गये उनसे तुम्हारा कोई वास्ता नहीं (अनआम 151) मानो नबी सल्ल0 की ज़ात इस बात से पाक है कि वह इन्सानों को गिरोहों में बांटे।

कमज़ोरी की जड़ :–

दूसरी जगह अल्लाह तआला ने क़ुरआन में फ़रमाया कि हुक्म मानों अल्लाह का और उसके रसूल का, आपस न झगड़ों वरना कमज़ोर हो जाओगे और तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी। सब्र से काम लो, अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है। (अनफ़ाल 141) हज़रत अबू उमामा रज़ि0 ने हुज़ूर की एक हदीस बयान की है कि कोई भी क़ौम हिदायत की राह पर चल पड़ने के बाद उस वक़्त गुमराही का शिकार हुई जब उसको आपस में झगड़ने की आदत पड़ गयी (अहमद, तिर्मिज़ी)

यह आयत और यह हदीसे रसूल सल्ल0 वाज़ेह तौर पर हमें चौकन्ना करती है कि आपस में झगड़ने की आदत न सिर्फ उम्मत में कमज़ोरी पैदा करती है बल्कि गिरोह दर गिरोह बांट कर उसको बेवज़न बना देती है। मामूली और ग़ैर अहम बातों की बुनियाद पर झगड़ने और गुमराह होने के फ़तवे क़ौमों की गुलामी और बर्बादी का

सबब बने हैं और उन पर अत्याचारी और अन्यायी हुक्मेरानों को थोप दिया गया है। यह अल्लाह की सुन्नत है और क़ुरआन में अल्लाह ने कहा कि तुम हमारी सुन्नत में कोई परिवर्तन न पाओगे। इन्सानी तारीख में अल्लाह की इस सुन्नत (तरीका) का इज़हार होता रहा है।

इतिहास का सबक़ :

जब ईसाई हुक्मेरां बैतुल मुकद्दस पर काबिज़ थे। उस वक्त उनके उलमा और अवाम इसी तरह मामूली और तुच्छ बहसों में व्यस्त थे और अपने बुरे अमल से वह उस वक्त भी बाहर न निकल सके। जब सलाहउद्दीन अय्यूबी ने बैतुल मुक़द्दस का घिराव कर लिया था। वक्त की ज़रूरत थी कि ईसाई आलिम और अवाम मैदाने जंग में आ जाते और पवित्र इबादतगाह की हिफाज़त करते। लेकिन उस वक्त वह बहस व मुनाज़रा कर रहे थे कि हज़रत ईसा अलैह0 का पाखाना पाक था या नापाक। इतिहास बताता है कि वह सलाहउद्दीन अय्यूबी रह0 के हाथों पराजित हुये और अपनी हुकूमत और बैतुलमुकद्दस दोनों से वंचित हो गये।

नामुनासिब इख्तिलाफ़ :

नामुनासिफ फुरूई और फिकही इख्तिलाफ़ फिर उस पर ज़िद तास्सुब को जन्म देता है। उसके नतीजे में आदमी हक, नाहक के फर्क़ से भी बेपरवा हो जाता है। बल्कि तारीख से मालूम होता है कि तास्सुब व पक्षपात उन्हें हक़ के मुकाबले में बातिल का साथ देने जैसी घिनौनी हर्कत तक करवा देता है। इस तरह वह लोग अपनी और पूरी मिल्लत की भयानक तबाही का सबब बन जाते हैं। जबकि क़ुरआन ने हमें ताकीद थी कि मोमिनों को छोड़कर दुश्मनों को अपना साथी और दोस्त न बनाओ, वरना तुम अपनी हैसीयत खो दोगे (आले इमरान) लेकिन इस उम्मत में लोगों ने न क़ुरआन की चेतावनी का ख्याल रखा न अल्लाह के नबी सल्ल0 की हिदायत का लिहाज़।

मुसलमानों की तारीख में हमें वह दिन और देखने को मिला है कि जब चंगेज खां ने ख्वारज़्म की हुकूमत पर हमला किया तो बग़दाद के हाकिमो ने अपने उन भाइयों की मदद के लिये कुछ न किया क्योंकि वह शाफ़िई मसलक के लोग थे और यह लोग हनफ़ी थे। फिर वही हलाकू जब बग़दाद पर हमला करने चला तो ख्वारज़्म के शाफिई ओलमा ने न सिर्फ हलाकू को रास्ते की रहनुमाई की बल्कि बग़दाद की अन्दरूनी कमज़ोरियों से भी वाकिफ कराया जहां से हलाकू के लिये कामयाब होना आसान हो गया। किताब ''अस्वाब ज़वाले उम्मत'' में आपको मिलेगा कि जब हलाकू ने बग़दाद का घिराव किया तो हमारे उलमा वही सब कुछ कर रहे थे, जो ईसाई उलमा बैतुल मुक़द्दस के घिराव के वक्त कर रहे थे। हलाकू का मिलकर मुक़ाबला करने के बजाये वह स्टेज सजा कर हनफी और शफ़िई एक दूसरे को नीचा दिखाने में सारी सलाहियत और ताक़त झोंक रहे थे। तारीख ने उन को भयानक अंजाम दिखाया कि दरिया–ए–दजला का पानी एक महीने तक मुसलमानों के खून से रंगीन रहा। न हनफ़ी बचे न शाफिई। बल्कि बगदाद जो उस वक्त इस्लाम का महान शैक्षिक सम्पत्ति और इन्सानियत की रहनुमाई का सामान रखता था, वहां किताबों को दरिया में फेंक दिया गया सियाही से दरिया का रंग काला हो गया। उम्मत अपनी तारीख के इस दौर से भी आज तकनसीहत हासिल नहीं कर सकी। क़ुरआन कहता रहा कि ज़मीन में चल फिर कर देखो कि झुठलाने वालों का क्या अन्जाम होता रहा है। मौजूदा दौर में फिर वही मसलकी तास्सुब की तारीख दुहराई गयी जहां इस्लाम के नाम पर ग़ालिब होने वाली जमाअत की हुकूमत को सिर्फ इसलिये बेतख्त किया गया और खुलकर बातिल का साथ दिया गया कि वह इस्लाम में दीन व दुनिया और इबादत व सियासत में फर्क करके हुक्मेरानी की क़ायल न थी। नतीजा यह है कि अल्लाह ने ज़ालिम व जाबिर हुक्मेरा को इस कौम पर मुसल्लत कर दिया। इसी तरह अफगानिस्तान में जब खालिस इस्लाम

के नाम लेवा मुजाहिदों ने रूस को मुल्क से बाहर खदेड़ने के बाद आपस में भी बन्दूक और तोपों के मुंह खोल दिये तो उस वक्त विश्व स्तर पर ओलमा–ए– कराम के दरम्यान उन आपस में टकराने वालों के बीच इत्तेहाद व इन्तेफाक़ की कोशिशें करने के बजाये, यह बहस चल रही थी कि औरतों के लिये ज़ेरे जामः (नीचे पहनने का कपड़ा) कौन सा जाइज़ है और कौन सा नाजाइज ? जबकि क़ुरआन की स्पष्ट हिदायत को वह जानते थे कि जब मुसलमानों के दो गिरोह आपस में लड़ पड़ें तो उनमें सुलह करा दो, उनको यह याद न रह सका कि नबी–ए–कराम सल्ल0 ने हरमे काबा को सम्बोधित करके फ़रमाया था कि ऐ हरमे काबा तेरी हुरमत अल्लाह के नज़दीक सबसे ज़्यादा है, लेकिन क़सम है उसकी जिसके कब्ज़े में मेरी जान है एक मोमिन की जान, एक मोमिन का माल और एक मोमिन की इज़्ज़त की हुरमत तुझसे कहीं ज़्यादा है।

लेकिन अफ़सोस ! जब फुरूआते दीन (वह बातें जिनका सम्बंध बुनियादी अक़ीदों और मसलों से न हो) को अस्ल दीन बना लिया जाये तो दीन की बुनियाद छूट जाती है और फुरूआत ही बुनियाद बन जाती हैं। नाआक़बत–अन्देशी (अदूरदर्शिता) का यह सिलसिला यहीं तक नही रुकता है बल्कि एक दूसरे को काफ़िर बनाने और मज़ाक उड़ाने तक पहुँच जाता है।

इमामों के तरीके से दूर :

हमारे इमामों के नज़दीक उन इख्तिलाफ़ात की हक़ीक़त क्या थी उसका अन्दाज़ा इस वाक़िया से लगा सकते हैं कि जब इमाम शाफ़िई रह0 और इमाम मुहम्मद रह0 ने इमाम शाफ़िई रह0 के तक़वा और इल्मी सलाहियत को देखते हुये उनसे नमाज़े फज्र की इमामत करवाई और इमाम शाफ़िई रह0 ने भी उसका जवाब वुसअते कल्बी (विशाल हृदयता) से दिया कि वह ख़ुद नमाज़े फज्र में कुनूते नाज़िला पढ़ते थे लेकिन यहां क़ुनूते नाज़िला नहीं पढ़ी।

इमाम शाफ़िई रह0 के साथ उनके कुछ शागिर्द भी थे उन्होंने सवाल किया कि क्या आपने अपना मसलक बदल लिया है? तो उन्होंने जवाब दिया कि यहां की अवाम यहां कब्र में लेटे हुये मेरे भाई (इमाम अबू हनीफ़ा रह0) के मसलक पर चलते हैं। इसलिये मैंने इस पर अमल किया। दूसरी तरफ यहां मसलकी तरफदारी की बिना पर रिश्ते तोड़ लिये जाते हैं और सलाम व कलाम तक बन्द कर दिया जाता है और इसी को लोग दीनदारी समझते हैं। हालांकि यह दीन के साथ खुला हुआ मज़ाक़ है।

हमारे इमामों की यही वुस्अतेक़ल्बी (विशाल हृदयता) और रौशन ज़मीरी है जो इस उम्मत को दीने हनीफ़ की अस्ल की तरफ़ लौटने का ज़रिया बन सकती है और उसकी ख़ैर व बर्कत से हमारी ज़िन्दगियों और मामलात में सामन्जस्य पैदा कर सकती है। जिसके लिये हर मुखलिस साहिबे ईमान का दिल बेचैन होता है और उसी से हम इस सरज़मीन हिन्द में अपने वतनी भाइयों के लिये अपने अमल से हिदायत व कामयाबी का पैग़ाम आम कर सकते हैं। फिर यही मुस्बत राह (Positive thought) हमारे नौजवानों को समझायगी कि वह अपने जोश व अमल को लेकर उस साफ रास्ते पर चल पड़ें।

अल्लाह तआला हमें अपनी तंग नज़री को वुसअते नज़र (दूरदृष्टि) के हकीमाना रवइये में बदल कर सिराते मुस्तक़ीम पर चल पड़ने की तौफीक अता फ़रमाये। (आमीन)

सारी इन्सानीयत तक अल्लाह का पैग़ाम पहुंचाना फर्ज़े मन्सबी है :

मुहतरम मौलाना कलीम सिद्दीकी (अल्लाह उनकी हिफाज़त फ़रमाये) हिन्दुस्तान में खुदा के सभी बन्दों तक इस्लाम की दावत आम करने की मुहिम और सक्रिय रहने वालों में एक मुम्ताज़ आशिके रसूल हैं। दावती काम के सम्बंध से उनकी तहरीर के चन्द पैराग्राफ देखें ।

1— ''रास्ता सिर्फ एक ही है अपने बुज़ुर्गो की, सी शान व शौकत और अज़मत व सरबुलन्दी यहां तक कि पूरी दुनिया पर रोब व दबदबा

हासिल करने के लिये उम्मते मुस्लिमा को अपना दाइयाना किरदार अदा करना पड़ेगा और देने वाली उम्मत बनकर अपने दाइयाना मुक़ाम का हक़ अदा करना होगा। वरना हम ग़ैर इस्लामी विचार धारा के शिकार होकर बातिल के सैलाब में बहते चले जायेंगे और क़ौमों से भीख मांगना और उनका डर और ख़ौफ़ हमारा मुकद्‌दर बना रहेगा।''

2— ''इसलिए ईमान की दावत का और कुफ्र व शिर्क से लोगों को निकालने का काम दूसरे कामों से ऊपर होगा। इस मौक़े पर हमारा नफ़्स हमें यह बहाना सिखाता है कि पहले अपनों की इस्लाह हो जाये और नाम के मुसलमान काम के मुसलमान बन जायें फिर दूसरों की ख़बर भी ले लेंगे। यह बात वाकई बड़े अक़्ल की मालूम होती है और उसमें अपनी इस्लाह की फ़िक्र ज़्यादा महसूस होती है मगर ग़ौर करने से मालूम होता है कि इस बात में नफ़्स की मक्कारी की सिवा और कुछ नहीं है।''

3— ''दावत के बग़ैर ईमान अधूरा है और हक़ तो यह है कि दावत के बग़ैर इख़लास भी मुम्किन नहीं है। यानी जो शख़्स अपने को ईमान वाला कहता है और वह दावत का काम नहीं करता, वह पूरी तरह से मुख़लिस भी नहीं हो सकता। नबी का दावती दर्द जान खपाये बग़ैर नबी की पैरवी का तसव्वुर करना भी मुहाल है, क्योंकि इख़लास भी दावत के बगैर ना मुकम्मल है। इसलिए अपनी इस्लाह की फिक्र के लिये और अपनी ईमानी ज़िम्मेदारी पूरी करने के लिए दावत इलल ईमान का हक़ अदा करना हमारी ज़रूरत है।''

4— ''अपनी इस्लाह और अपने अन्दर ईमान की बक़ा के लिये इस से आसान कोई रास्ता नहीं कि दूसरों को ईमान की दावत दी जाये। इन्सान की नफसियाती कमज़ोरी बल्कि एक तरह की खूबी है कि जब वह किसी को भी खैर की दावत देता है तो वह खैर उसके अन्दर भी पैदा हो जाती है और वह जब किसी को बुराई से रोकता है तो खुद उसके लिए भी बुराई से रुकना आसान हो जाता है।''

5– सैय्यद अहमद शहीद रह0 फ़रमाया करते थे कि इखलास के बग़ैर कोई अमल क़ाबिले कुबूल नहीं। और इखलास का तराज़ू मैं आपको देता हूँ। अपने अमल के इख़लास को तौल लिया करो। फ़रमाया अगर दीन के हर लाइन के काम करने वालों की एहसान मन्दी दिल में है तो समझना चाहिये कि इख़लास है। अगर एहसान मन्दी के बजाये मुख़ालफ़त है या यह हसद क्यों हो रहा है या उसका काम बन्द होना चाहिये, या सब कुछ मैं कर रहा हूँ दूसरा कुछ नहीं कर रहा है। अगर ऐसा है तो समझना चाहिये कि इख़लास नहीं है। अपनी नीयत की इस्लाह करें वरना काम बन्द कर दें।''

6– ''आम इन्सानों का फर्ज़े मन्सबी (पदीय ज़िम्मेदारी) और बन्दगी की मेराज अल्लाह की गुलामी है। मगर उम्मते मुस्लिमा का फर्ज़ेमन्सबी सौ प्रतिशत अल्लाह की बन्दगी के साथ सारी इन्सानीयत को ख़ुदा की गुलामी और बन्दगी की राह पर चलाना है।''

जो जहां है अल्लाह हम में से हर शख़्स को लगन के साथ दावत का काम करने की तौफीक़ बख्शे। अगर हमारे ज़रीये एक शख़्स को भी ईमान की राह मिल जाये तो सारी नेमतों से बड़ी नेमत है।

अलामिया बराये इत्तेहादे उम्मत :

हिन्दुस्तानी मुसलमान इस वक्त नित–नये मसाइल में घिरे हुये हैं, इन मसाइल में सबसे बड़ा मसला अपने दीन व ईमान और तहज़ीबी पहचान को हिन्दुस्तान के मौजूदा माहौल में बाकी रखना है, और इसी जज़्बे को अपनी नई नस्ल में मुन्तकिल (ज्तंदेमित) करना है और यह काम सबको मिलजुल कर करना है ताकि इस सरज़मीन में इस्लाम की खेती हरी–भरी और सरसब्ज़ व शादाब रहे और हम अपने वजूद से देशवासियों को फायदा पहुंचाते रहें।

इस ज़रूरी और बुनियादी काम के लिये हम सबको ज़ात, बिरादरी, खानदान के तकसीम से ऊँचा उठकर और मसलक और फिरक़े के सारे इख़्तिलाफ़ात से ऊपर उठ कर खुदा की रस्सी को

मज़बूत पकड़ना है, रंग व नस्ल के फ़र्क को मिटाना है, भाषा और क्षेत्र के बुत को आस्तीन से निकालना है, और इस हक़ीक़त को दिल व दिमाग़ में बिठाना है कि इन्तेहाद व इन्तेफाक़ ही ज़िन्दगी है और बिखराव और इख़्तिलाफ़ मौत। मगर अफसोस कि कुछ दिनों से यह बात शिद्दत के साथ महसूस की जा रही है कि हिन्दुस्तानी मुसलमान ज़िन्दगी की राह (इत्तेहाद व इन्तेफाक) को छोड़कर मौत (इन्तिशार व इख़्तिलाफ़) की तरफ बढ़ रहे हैं जो हमारी दीनी, मिल्ली और इस्लामी ज़िन्दगी के लिय हद दर्जा ख़तरनाक है, इस लिए आलमे इस्लाम के बावकार इदारा राविता आलमे इस्लामी मक्का मुकर्रमा की मजलिस फ़िक़ही ने अपने इजलास (24 से 27 सफर 14.8 हिजरी) में दुनिया भर के मुसलमानों से भाईचारगी और इतिहाद की अपील करते हुये कहा है कि मुसलमान अपने फ़िक़ही और मसलकी इख़्तिलाफ़ात में सन्तुलन और तवाज़ुन के दामन को न छोड़े और एक दूसरे को चोट न पहुँचाये। आइये इस मौक़े पर हम अपने इस सबक़ को ताज़ा करें कि –

आइये हम एक खुदा के बन्दे हैं, हम सब हज़रत मुहम्मद सल्ल0 को अपना आख़िरी रसूल मानते हैं, हमारा ईमान है कि कुरआन हकीम खुदा की आखिरी किताब है। हम जब नमाज़ पढ़ते हैं तो काबा ही को अपना क़िबला बनाते हैं, हमारा दीन इस्लाम है जिससे कियामत तक के लिये अल्लाह राज़ी हो गया, और हम ने अपनी नजात के लिये उस दीन इस्लाम को अपना लिया।

इसलिए हम अहद करते हैं कि –

1– हम तमाम मुसलमान चाहे किसी ज़ात, बिरादरी, खानदान और मसलक व फ़िरक़े से वाबस्ता हों, एक रहेंगे, और अपनी अमली ज़िन्दगी से इस्लामी भाईचारगी और बराबरी का सुबूत देंगे।

2– अपने मसलक और फ़िरक़े के इख़्तिलाफ़ को इल्मी दायरे तक सीमित रखते हुये उम्मत की सामूहिकता को प्रभावित न होने देंगे।

3– एक दूसरे के इमाम, रहनुमा और पेशवा के एहतिराम का लिहाज़ रखेंगे, और उनकी शान में ऐसी बातों के इज़हार से परहेज़ करेंगे जिनसे उनकी इज़्ज़त व इहतेराम में फर्क़ आता हो।

4– हम लोग आपस में भी एक दूसरे का इहतिराम करेंगे, न किसी का मज़ाक उड़ायेंगे और न दिल दुखायेंगे, एक दूसरे की जान व माल और इज़्ज़त व आबरू का पास व लिहाज़ रखेंगे ।

5– अच्छे और नेक काम में एक दूसरे की मदद करेंगे, एक दूसरे के ख़िलाफ इल्जाम तराशी, अखबारी बयान बाज़ी और पोस्टर बाज़ी से परहेज़ करेंगे, और हम अपनी ज़िन्दगी से उस हक़ीक़त को उजागर करेंगे कि हम एक दूसरे के दोस्त हैं न कि मुखालिफ़।

6– अपने इख़्तिलाफ़ी और निज़ाई मसले आपसी गुफ्तगू से हल करेंगे, और जहां शरई अदालत क़ायम हो वहा अपने मसले को पेश करेंगे।

7– हम अपनी इज्तिमाई ज़िन्दगी में सब्र व सहनशीलता, बर्दाश्त और उदारता का सुबूत देंगे।

8– ज़ात, बिरादरी, क़बीला और खानदान की तकसीम में उलझ कर अपनी ज़िन्दगी और सामूहिक एकता को हर्गिज़ नुकसान न पहुँचने देंगे और उस हक़ीक़त का इज़हार करेंगे कि अल्लाह के यहां बड़ाई का मेआर तक़वा और परहेज़गारी है।

9– अपने फ़ुरूई और आंशिक इख्तिलाफ़ात को दीन और अक़ीदा की बुनियाद और आधार नहीं बनायेंगे, और अपनी इज्तिमाई और मिल्ली ज़िन्दगी में एक मज़बूत इमारत की तरह रहेंगे जिसकी ईंटें एक दूसरे को ताक़त पहुँचाती है।

10– कुछ फिरक़ा परस्त लोग और राजनैतिक शोषण पूर्व नियाजित करने वाली ताकतें साजिश के तहत मुसलमानों को मुख़्तलिफ़ किस्म की गिरोहबन्दी और फ़िरक़ाबन्दी में धकेल रही हैं। हम मुसलमान अपने शऊर और मोमिनाना दूरअन्देशी से इन साज़िशों और मन्सूबों को नाकाम बनायेंगे।

★ ★ ★